

## बौद्धग्रन्थों में अनेकान्तवाद

— डॉ. श्रीमती राका जैन

लखनऊ

अनेकान्तदृष्टि सर्वव्यापी है जिसकी प्रतिछवि बौद्धदर्शन में भी देखने को मिलती है। अनेकान्त-स्याद्वाद को समझाने के लिए हाथी का उदाहरण सर्वप्रसिद्ध है जिसका उल्लेख सुत्तपिटक के उदानपालि में मिलता है। उदानपालि के छठवे वग्ग जच्चन्धवग्ग के पठमनानातिथियसुत्त के अनुसार श्रमण-ब्राह्मण आपस में लड़ते-झगड़ते, विवाद करते और एक-दूसरे को मुख रूपी भाले से बींधते हुए विहार करते थे— धम्म ऐसा है, ऐसा नहीं। ‘एदिसो धम्मो, नेदिसो धम्मो, नेदिसो धम्मो, एदिसो धम्मो’। बात तथागत बुद्ध तक पहुँचती है। श्रावस्ती में विहार करते समय तथागत ने कहा— भिक्षुओं—

“अञ्जतिथिया, भिक्खवे! परिब्बाजका अन्धा अचक्खुक, अत्थं न जानन्ति, अनत्थं न जानन्ति, धम्मं न जानन्ति, अधम्मं न जानन्ति। ते अत्थं अजानन्ता अनत्थं अजानता धम्मं अजानता अधम्मं अजानन्ता खण्डनजाता कलहजाता विवादापन्ना अञ्जमञ्जं मुखसत्तीहि वतुदन्ता विहरन्ति— एदिसो धम्मो, नेदिसो धम्मो।”

अर्थात् अन्यतैर्थिक साधु अन्धे, बिना आँख वाले अर्थानर्थ या धम्माधम्म को भी नहीं जानते हैं। अर्थानर्थ या धम्माधम्म को न जानने के कारण ही आपस में लड़ते, झगड़ते हैं। भिक्षुओं! बहुत पहले, इसी श्रावस्ती में एक राजा रहता था। उस राजा ने किसी पुरुष को आमन्त्रित किया, हे पुरुष! सुनो, श्रावस्ती में जितने जात्यन्ध हैं, सभी को एक जगह इकट्ठा करो।

उस व्यक्ति ने सभी जात्यन्धों को इकट्ठा कर देव की आज्ञानुसार उन्हें हाथी दिखाया। कुछ जात्यन्धों ने हाथी के सिर को पकड़ा—हाथी ऐसा होता है। कुछ जात्यन्धों ने हाथी के कान, दाँत, सूँड, शरीर, पैर, पीठ और पूँछ को पकड़ा—हाथी ऐसा होता है।

जिन जात्यन्धों ने हाथी के सिर को पकड़ा, उन्होंने कहा— देव, हत्थी सेय्यथापि कुम्भोति जैसे कोई बड़ा घड़ा।

“ये हि, भिक्खवे, जच्चन्धेहि हत्थिस्स कण्णो दिट्ठो अहोसि, ते एवमाहंसु—एदिसो एदिसो देव, हत्थी सेय्यथापि सुप्पो’ति। कान पकड़ने वाला जात्यन्ध हाथी को सूपवत्, दाँत पकड़ने वाला कीले वत्, सूँड पकड़ने वाला हल की लम्बी फाल वत्, हाथी के शरीर को

पकड़ने वाला कुठला (कोठी) वत्, पैर पकड़ने वाला पेड़ के टूठ के समान, जंघा पकड़ने वाला उदुक्खल (ऊखल) के समान, पूँछ को पकड़ने वाला मूसल के समान, बालधि (पूँछ के बाल) को पकड़ने वाला सम्मज्जनी (झाड़ू) के समान बताता है और वे लड़ाई झगड़ा करते हैं। उनकी मूर्खता देख राजा खूब हंसा।

भिक्षुओं! इसी तरह, ये साधु अंधे और बिना आँख वाले हो आपस में लड़ते, झगड़ते और एक दूसरे को मुख रूपी भाले से बीधते हैं— एदिसो धम्मो, नेदिसो धम्मो।

इसे ऐसा जानकर तथागत के मुँह से उदान के ये शब्द निकल पड़े—

**इमेसु किर सज्जन्ति, एके समणब्राह्मणा।**

**विग्गह न विवदन्ति, जना एकडगदस्सिनो ति।**

अर्थात् कितने श्रमण और ब्राह्मण इसी में झूझे रहते हैं। धम्म के केवल एक अंग को देख आपस में विवाद करते हैं।

- इससे स्पष्ट है कि एकान्तदृष्टि झगड़े की जड़ है और अनेकान्त सामंजस्य की।

— विनयपिटक के महावग्ग के 1.1.5 में भिक्षुओं को उपदेशित करते हुए तथागत बुद्ध कहते हैं कि— भिक्षुओं, प्रव्रज्या लेने वाले को दो अन्तों का सेवन नहीं करना चाहिए कौन से दो?

1. कामेसु कामसुखानुयोगो और दूसरा अत्तकिलमथानुयोगो अर्थात् अत्यधिक कामसुखों में आसक्ति— जो हीन, ग्राम्य, पृथग्जनोचित, अनार्य एवं अनर्थों की जड़ है और दूसरी अत्यधिक कठोर तपस्या—आत्मक्लेशों में आसक्ति— जो दुःखमय है। अनार्य है, अनर्थों की जड़ है। भिक्षुओं, इन दोनों अन्तों को छोड़कर तथागत ने मध्यममार्ग को साक्षात्कार किया। ये दो अन्त हैं, एकान्त। डॉ० राजेन्द्रलाल दोसी ने मध्यममार्ग का अनेकान्त का प्रकार कहा है।

पक्ष में रहने अथवा सपक्ष में उसकी सत्ता होने के कारण अन्वयात्मक हेतु तथा विपक्ष में उसकी सत्ता न होने के कारण उसी को व्यतिरेकात्मक माना जाता है अन्वयी और व्यतिरेकी— ये स्पष्ट ही परस्पर विरोधी हैं इस तरह परस्पर विरोधी का कथन करना धर्मों को एक हेतु मानना स्पष्ट ही अनेकान्तदृष्टि को अपनाना है।

- हेमचन्द्राचार्य वीतरागस्तोत्र में लिखते हैं—

**विज्ञानस्यैवमाकारं नानाऽऽकारकरं वितम्।**

**इच्छस्तथागतः प्राज्ञो नानेकान्तं प्रतिक्षिपेत्।।**

बौद्ध विज्ञान को एक मानते हैं। उसमें मूलभूत एक आकार है। जब उसको प्रयोग में लाते हैं, तब उसमें प्रमाता, प्रमिति एवं प्रमेय के आकार रहते हैं। उक्त तीनों पदार्थों के प्रतिभासरूप विज्ञान को एक मानना—वस्तु को एक—अनेक रूप मानना है। यह अनेकान्तदृष्टि है।

- बौद्धदर्शन में स्वप्नादि ज्ञान को बाह्य पदार्थ की प्राप्ति न कराने के कारण भ्रान्त तथा स्वरूप की दृष्टि से अभ्रान्त मानते हैं स्वप्न में 'मैं धनी हूँ, मैं राजा हूँ' आदि विकल्प ज्ञान (विकल्पक) होते हैं। ये विकल्प ज्ञान बाहर धनीपन का/राजापन का अभाव होने से जागने पर दरिद्रता का अनुभाव होने से भ्रान्त है, परन्तु वे अपने स्वरूप की दृष्टि से अभ्रान्त है क्योंकि वैसे विकल्पज्ञान स्वप्न में अवश्य हुए हैं इसी तरह शक्ति का रजत का भान कराने वाला मिथ्याविकल्प रजतरूप बाह्य अर्थ का प्रापक न होने से भ्रान्त है। किन्तु वैसा मिथ्याज्ञान हुआ तो अवश्य है। उसका स्वयं संवेदन तो होता ही है। अतः स्वरूप की दृष्टि से वह अभ्रान्त है। इस तरह एक ही मिथ्या विकल्प को बाह्य अर्थ में भ्रान्त और स्वरूप में अभ्रान्त मानना एक ही में भ्रान्तत्व एवं अभ्रान्तत्व रूप विरुद्ध धर्म मानना अनेकान्त को अंगीकार करता है।

- बौद्धदर्शन के क्षणभंगवाद के अनुसार किसी भी क्षण को पूर्व क्षण का कार्य तथा उत्तर क्षण का कारण माना जाता है। क्षणों की जब संतति परम्परा चलती है, उसमें इसी प्रकार कार्य—कारण भाव चलता है। यदि वह पूर्व क्षण का कार्य न हो तो सत् होकर भी किसी से उत्पन्न होने के कारण वह नित्य हो जाएगा। यदि उत्तर क्षण को वह उत्पन्न न करे तो अर्थ क्रियाकारी न होने से अवस्तु हो जाएगा। क्योंकि यहाँ अर्थक्रियाकारित्व ही वस्तु का लक्षण माना जाता है—

**अर्थक्रियासामर्थ्यलक्षणत्वाद् वस्तुनः” – न्यायबिन्दु पृ. 17**

अतः मध्यक्षण में पूर्व की अपेक्षा कार्यता और उत्तर की अपेक्षा कारणता— इन दोनों विरुद्ध धर्मों को एक ही मध्य क्षण में मानना अनेकान्तदृष्टि को पुष्ट करना है।

- भारतीय ज्ञानपीठ 1964 से प्रकाशित 'दर्शन—अनुचिन्तन' में महामहोपाध्याय श्री गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी लिखते हैं कि—

“बौद्धदर्शन में सब पदार्थों को क्षणिक माना जाता है। किन्तु क्षणिक होने पर 'यह वही पदार्थ है' इस रूप में प्रत्यभिज्ञा अर्थात् पहचान कैसे होगी, इसके लिए वे क्षणिक पदार्थों की एक संतति अर्थात् सिलसिला मानते हैं। क्रमशः क्षणिक पदार्थों की धारा चलती

है, उस धारा से आए हुए सब क्षणिक पदार्थ एक रूप ही व्यवहार में मान लिए जाते हैं। इसलिए प्रत्यभिज्ञा या पहचान बन जाती है। अब यदि यह जाना जाय कि संतति उन क्षणिक पदार्थों से भिन्न है या अभिन्न? यदि अभिन्न माना जाय तो वह भी उन पदार्थों के समान क्षणिक ही हुआ, तब वह भी सब में अनुगत कैसे बन सकेगा? और बिना अनुगत हुए पहचान कैसे करा सकेगा? यदि भिन्न एक रूप से सब में अनुगत मान लिया जाय तो नाम मात्र का विवाद रहा, स्थिर पदार्थ तो मान ही लिया गया। जिन पदार्थों को हम घट-पट नाम से कहते हैं, उनको ही उन्होंने संतति नाम दे दिया, तो इस प्रश्न का निश्चित रूप से वे कुछ भी उत्तर नहीं दे सकते अतः संतति पदार्थों से भिन्न भी है और अभिन्न भी। यहाँ बौद्धदर्शन में भी स्याद्वाद/अनेकान्तवाद आ गया।

- बौद्धदर्शन में विभज्यवाद एक विशेष वाद है। 'विभज्य, विभागं कृत्वा वादस्य कथनम्' अर्थात् प्रश्न का विभाजन-विश्लेषण करके अलग-अलग अंशों का (अपेक्षा से) उत्तर देना विभज्यवाद कहलाता है। विभज्यवादी का मतलब एकांशवादी नहीं। वस्तु का विश्लेषण करके सापेक्ष रूप से उत्तर देना विभज्यवाद कहलाता है। इसमें अनेकान्तवाद दृष्टव्य है। विभज्यवाद और अनेकान्तवाद दोनों एक ही लाइन पर चलते हैं। प्रो. मोहनलाल मेहता अपनी जैनदर्शन पृ. 82 पुस्तक में लिखते हैं कि "बुद्ध का विभज्यवाद स्याद्वाद का ही रूपान्तर है विभज्यवाद अपेक्षा पर आधारित है और स्याद्वाद भी। ये दोनों वाद सापेक्षवाद हैं। सापेक्षवाद का ही अन्य नाम अनेकान्तवाद है।

**“न सत् नासत् न सदसत् न चाप्यनुभयात्मकम्।**

**चतुष्कोटिविनिमुक्तं तत्त्वं माध्यमिकाः विदुः।”**

माध्यमिक मत चतुष्कोटि विनिर्मुक्त है जो निषेधरूप से अनेकान्तवाद ही है।

सत्कार्यवाद में सांख्य जब एक ही निश्चित हेतु से कार्य मानते हैं तो उसके प्रत्युत्तर में बौद्ध शान्तरक्षित अनेकान्त के आधार पर ही अनेकान्तिक हेतु प्रतिपादित करते हुए अनित्यता सिद्ध करते हैं।

सामान्य दृष्टि से देखने में स्याद्वाद या अनेकान्त या बौद्धदर्शन का मध्यममार्ग विपरीत हैं क्योंकि बौद्धदर्शन में दोनों दृष्टियों को पूर तरह से नकारा गया है वहाँ दोनों दृष्टियों को सापेक्ष स्वीकार करते हुए एकान्त रूप से नकारा गया है। भाव यह है कि यदि हम ही का प्रयोग करते हैं तो वह एकान्तदृष्टि हो जाती है तथा भी का प्रयोग करते हैं तो अनेकान्तदृष्टि हो जाती है। जबकि बौद्ध परम्परा में दोनों अतियों के बीच मध्यममार्ग है।

दार्शनिक प्रस्थानों में भी दो सत्यों की अवधारणा भी एक सत्य की जगह अनेकान्तता है। अनेकान्त एवं बौद्धदर्शन में चतुष्कोटि विनिर्मुक्त में भी तुलना की जा सकती है।

न सन नासन् न सदसन्न चाप्यनुभयात्मकम्।

चतुष्कोटि विनिर्मुक्तं तत्त्वं माध्यमिकाः विदुः॥ –माध्यमिक कारिका, 1/7

• अनेकान्तवाद हमें सर्वहितकर विशाल दृष्टिकोण प्रदान करता है। जड़ चेतनमय इस विश्व की प्रत्येकवस्तु सत्य, शाश्वत और अनन्त है। प्रत्येक वस्तु अनन्तधर्मी हैं अतीत, वर्तमान और भविष्य में कभी भी उसका अभाव नहीं होता, फिर भी वह कूटस्थ नित्य नहीं है, परिणामी नित्य है। प्रत्येक वस्तु में पर्याय दृष्टि से प्रतिपल उत्पाद और क्रम निरन्तर चलता रहता है। अर्थात् द्रव्य दृष्टि से वस्तु नित्य है, पर्यायदृष्टि से प्रतिक्षण परिवर्तनशील है— द्रव्यनित्यं आकृति पुनरनित्य।

इस तरह अनेकान्तदृष्टि इतनी व्यापक दृष्टि है कि वह विभिन्न दर्शनों को समाहित करने की क्षमता रखती है।

॥ नमोऽनेकवादाय ॥

सन्दर्भ ग्रन्थ विवरण—

1. प्रकृति परीक्षा, मैत्री प्रकाशन, 3/65, विकास खण्ड, गोमती नगर, लखनऊ, प्रकाशन वर्ष— 2019
2. बौद्ध दर्शन मीमांसा, बलदेव उपाध्याय ।
3. जैन संस्कृति के विविध आयाम, डॉ. राका जैन, मैत्री प्रकाशन, 3/65, विकास खण्ड, गोमती नगर, लखनऊ ।
4. पालि सौरभ— प्रो. विजय कुमार जैन, मैत्री प्रकाशन, लखनऊ ।

सम्पर्क सूत्र— 3/65, विकास खण्ड,

गोमती नगर, लखनऊ—226010,

फोन— 8174849437

Email-dr.rakajain@gmail.com